नई तालीम का अनुभव और चिन्तन

❑ धीरेन्द्र मजूमदार

बुनिादी तालीम को लेकर जो शिक्षा-प्रयोग हुए उनकी कई अन्तर्धाराएं रही हैं। नयी तालीम इनमेंसे एक है जो ग्राम भारती के साथ विकसित हुई थी। प्रस्तुत अनुभव और सोच इस शिक्षा-प्रयोग का महत्वपूर्ण आयाम उपस्थित करता है । यदि बच्चे को उसके घरेलू काम और स्थानीय परिस्थितियों के माध्यम से शिक्षित करना है तो उसके लिए पृथक विद्यालय की जरूरत नहीं है । यह काम तो पहले से मौजूद विद्यालयों के रहते किया जा सकता है । दूसरे, जब बच्चे का सांस्कृतिक स्तर ऊंचा होगा तो उसमें और उसके परिवार के बीच विभेद उत्पन्न होगा ही। ऐसी स्थिति में समग्र नयी तालीम ही कारगर हो सकती है जिसमें बच्चे की बजाय परिवार-इकाई को ही शैक्षिक उन्नयन का लक्ष्य बनाया जाये । यह पत्र श्री धीरेन्द्र मजूमदार ने श्री सिद्धराज ढडढा को छठे दशक में लिखा था ।

पिछले महीने के पत्र में बलिया के सहकारी समाज के प्रयोग का विवरण लिखा था । इस बार समग्र नयी तालीम पर आगे के अनुभव तथा विभिन्न चिंतन का विवरण लिख रहा हूं । इस प्रश्न पर पिछला पत्र 1961 जनवरी में लिखा था । इस बीच ब्यौरे में विशेष नयी बात नहीं हुई , लेकिन समग्र नयी तालीम की दिशा क्या होगी ? इस पर कुछ स्पष्ट धारणा होने लगी है ।

ग्रामभारती की प्रवृत्तियाँ

ग्राम भारती की शुरूआत सात लड़कों से हुई । क्रमश: आज वह संख्या 12 तक पहुंच गई होगी । अपनी कुटिया के सामने थोड़ी सी जमीन खोदकर इसका श्रीगणेश हुआ था । उस जमीन पर खेती तथा बच्चों के घर के काम, शिक्षा के माध्यम रहे। इस प्रक्रिया से तालीम की दृष्टि से काफी प्रगति होने लगी । फिर भी बच्चों को पूरे समय शिक्षक के साथ रहने को मिले, इसका कोई छोर नहीं निकल रहा था । विभिन्न कार्यक्रमों के समवाय में विषयों की जानकारी कैसे दी जा सके, इसके प्रयोग में हम लोग लगे रहे।

एक बात विशेष रूप से देखने को मिली, वह यह कि जिन लोगों के बच्चे स्कूल नहीं जाते थे और घर के काम में भी विशेष फंसे नहीं थे, वे ही ग्रामभारती में तालीम के लिए आते थे । जो दो-चार लड़के स्कूल छोड़कर आये थे, वे इसलिए आये थे कि यहां पढ़ाई अच्छी थी । उनके माता-पिता अच्छी खेती सिखाने के लिए नहीं भेजते थे । दूसरी चीज यह देखने को मिली कि हमारी कोशिश के बावजूद बाबू लोगों के बच्चे इसमें नहीं आते थे । वे इसे ''मजदूर स्कूल'' ही कहते थे ।

फिर भी ''ग्राम भारती'' द्वारा दोनों वर्गों के लोगों एक साथ आयें, इसकी कोशिश जारी रही । इसका विवरण पिछले पत्र में दिया था ।

इस प्रकार 'ग्राम भारती' का काम अपने ढंग से रबी की फसल तक चलता रहा। रबी की फसल कटाई के समय पूरी 'ग्राम भारती' के लिए एक अच्छा कार्यक्रम मिल गया ।

मैंने पिछले पत्र में लिखा था कि यद्यपि पहले साल परस्पर अविश्वास और कटुता के कारण सामूहिक खेती आखिर में जाकर बरबाद हुई, फिर भी उसके चलते तथा आम शिक्षण और प्रचार के फलस्वरूप गांवों में संघर्ष के प्रसंग कम होते रहे । यह बात सहकारिता का वातावरण बनाने के लिए निसंदेह अनुकूल रही है । लेकिन बच्चों में मिलकर काम करने के फलस्वरूप परस्पर क्रियात्मक सहकारिता के भी दर्शन होने लगे । फसल कटाई में सहकार वृत्ति निश्चित रूप से प्रकट हुई, यद्यपि विजयभाई ने उनसे कह दिया था कि वे अलग-अलग कटाई कर सकते हैं फिर भी उन्होंने यही तय किया कि वे सामूहिक रूप से कटाई करेंगे । जितनी मजदूरी मिली, उसमें से काफी हिस्सा सामूहिक रूप से रख दिया, जिससे वे एक साथ खर्च कर सकें । फसल कटाई समाप्त होने पर ग्राम भारती की प्रगति के लिए एक नया अवसर हाथ में आया, वह यह कि खेत खाली हो जाने पर सबके पशु एक तरफ चरने जाने लगे । मैं हमेशा ग्रामीण जनता से कहा करती हूं कि भाई, इस विज्ञान के युग में हरेक को ज्ञान प्राप्त करना ही होगा । इसके लिए यह आवश्यक होगा कि सब लोग स्कूल जायें । लेकिन अगर सब लोग स्कूल चले जायेंगे तो घर व गृहस्थी का काम नहीं चल सकेगा । इसलिए यह जरूरी है

कि गांव भर के सारे घर-गृहस्थी के काम भी स्कूल के काम के रूप में परिणत किये जायें । उन्हें विनोद में कहता हूं कि अगर भैंस के पीठ पर बैठने वाले बच्चों को स्कूल भेजना संभव नहीं, तो स्कूल को ही भैंस की पीठ पर ले जाना होगा ।

फसल कट चुकने के बाद इस विनोद को साकार करने का अवसर मिला । ग्रामभारती के बच्चों के घर के सब पशुओं को एक तरफ चराने की योजना बनी । शिक्षक भी उनके साथ जाने लगे। ऐसे चराने के स्थान पर जो वर्ग लिया जाता था, उसका नाम ''बहियार-वर्ग'' रखा गया । बहियार का मतलब है, खेती के लिए मैदान । आसपास के लोगों को यह दिलचस्प चीज लगी । उन्होंने कभी इस प्रकार की चीजों को स्वप्न भी नहीं देखा होगा । इस बहियार-वर्ग से आकर्षित होकर चारों तरफ से लोग अपने बच्चों को ग्रामभारती में शामिल करने लगे । थोड़े ही दिनों में बच्चों की संख्या 12 से बढ़कर 45 तक हो गई । अधिक संख्या में बच्चे होने के कारण तीन शिक्षक तीन बहियार में जाने लगे । इस बहियार-वर्ग के अलावा बच्चे भैंस की पीठ पर बैठकर चराने जाते और रात को ग्राम भारती में आकर पढ़ते थे । उनकी किताबों में रस्सी बांधकर उनके गले में लटका दिया जाता था और वे मस्ती से भैंस की पीठ पर बैठकर पढ़ा करते थे । इस प्रकार पूरे क्षेत्र में एक अजीब वातावरण फैल गया। वहां पहले पशु चराने वाले बच्चे आपस में लडने, गाली देने तथा एक दूसरे की सम्पत्ति बरबाद करने के काम में लगे रहते थे । वहां वे अब पशु चराते समय पढ़ाई, अच्छे-अच्छे गीत गाने तथा रामायण का उच्चारण करने लगे । इससे ग्रामभारती के प्रति क्षेत्रभर के लोगों की दिलचस्पी बढ़ी ।

लेकिन बच्चे जो बढ़े, वह इसलिए नहीं कि लोग ग्राम भारती के विचार को समझ रहे थे, बल्कि इसलिए कि हम लोगों के नये तरीके देख उनके दिमाग में कुछ समय के लिए अजीब किस्म की अभिरुचि पैदा होती थी । अत: थोड़े दिन में छात्रों की संख्या 45 से 15-16 हो गयी, लेकिन इस दिलचस्पी के कारण हम लोगों को व्यापक रूप से विचार-प्रचार का मौका मिल गया ।

यह सब हुआ, लेकिन बाबू वर्ग के दिमाग से मजदूर-स्कूल की भावना नहीं मिटी । गांव में जो लोग ग्राम भारती का प्रचार और मजदूरों के बच्चों को शामिल कराने की कोशिश करते थे, वे भी अपने बच्चों को वहां नहीं भेजते थे । यद्यपि वे कहते थे कि ऐसी पढ़ाई कहीं नहीं होती, फिर भी सोचते थे कि मजदूरों के साथ अपने बच्चों को कैसे बैठायें । इसका कारण मैंने पहले पत्र में लिखा था कि यह क्षेत्र घोर सामन्तवादी मानस से भरा हुआ है ।

बाबू लोगों के बच्चों को न भेजने का एक दूसरा भी कारण है । वह यह कि वह मानते हैं कि शिक्षित व्यक्ति को नौकरी ही करनी है और ग्राम भारती में नौकरी के लिए कोई सर्टिफिकेट उपलब्ध नहीं है । यह समस्या पिछले 15 साल से नयी तालीम जगत के सामने निरन्तर खडी है। यह ऐसा प्रश्न है, जिस पर नयी तालीम-जगत को सोचने की जरूरत है । तालीम का लक्ष्य नौकरी है, इस मान्यता का निराकरण कैसे हो ? और जब तक इसका निराकरण नहीं होता, तब तक नयी तालीम का स्वरूप क्या हो, जिससे वर्तमान मान्यता के बावजूद नयी तालीम-प्रक्रियाओं के लिए लोक-सम्मति प्राप्त हो। इस दिशा में सोचने पर मुझे लगा कि नयी तालीम की प्रक्रिया अलग से बच्चों को लेकर नहीं हो सकती। अगर पूरे समाज को लेकर नयी तालीम की पद्धति चलेगी, तो समाज की इकाई-परिवार ही नयी तालीम की इकाई हो सकती है। इस विचार के आधार पर ही शिक्षा पद्धति की रूपरेखा तैयार हो सकती है । उसी की टेकनिक निकालना नयी तालीम के कार्यकर्त्ताओं के लिए बुनियादी कार्यक्रम है ।

किसी को शिक्षा दी नहीं जाती । शिक्षा की चाह होने पर उसकी पूर्ति ही वास्तविक तालीम है । हम जब यह सोचते हैं कि हमें नयी तालीम का काम चलाना है और उसकी पद्धति अमुक होगी, तो निस्सन्देह हमारे दिमाग में अपनी तरफ से कुछ तालीम देने का विचार है, ऐसा मानना पड़ेगा । नयी तालीम के लिए आवश्यक है कि वह खोज करे कि देश की जनता क्या चाहती है ? निस्संदेह आज की जनता की उत्कट मांग बच्चों की तालीम है । लेकिन उसका कारण यह नहीं कि देश का जन-समुदाय यह चाहता है कि बच्चों का सांस्कृतिक विकास हो और उसके माध्यम से देश सुसंस्कृत हो। बल्कि वे मानते हैं कि आज अपने आर्थिक प्रश्न हल करने के लिए नौकरी चाहिए और नौकरी के लिए शिक्षा चाहिए । अर्थात नयी तालीम का जो लक्ष्य है, वह लक्ष्य जनता का नहीं है । अत: केवल बच्चों की तालीम, आज की परिस्थिति में नयी तालीम नहीं हो सकती ।

बच्चों की पढ़ाई के प्रयोग

अब प्रश्न यह है कि जनता चाहती क्या है ? अभी ऊपर कहा है कि वह आर्थिक़ कारणों से बच्चों को पढ़ाना चाहती है अर्थात उनकी चाह आर्थिक समृद्धि की प्राप्ति है । जब तक हमारी तालीम की प्रक्रिया हमारी लक्ष्य पूर्ति की माध्यम साबित नहीं होगी, तब तक उसके लिए लोक सम्मति प्राप्त नही हो सकेगी । यही कारण है कि मैं आजकल कहता हूं कि गांव के जितने कार्यक्रम हैं, उन सबकी तरक्की ही नयी तालीम है और चूंकि वे कार्यक्रम पूरे परिवार के हैं, इसलिए पूरे परिवार ही विद्यार्थी की इकाई हो सकते हैं, न कि अलग अलग बच्चे ।

गांव के बाबू लोग इन्हीं कारणों से अपने बच्चों को तो भेजते नहीं थे, फिर भी ग्राम भारती की प्रगति देखकर उनमें काफी संतोष था और दूसरे साल उन्होंने दो बीघा जमीन बच्चों की खेती के लिए अलग कर दी । बच्चे मिलकर उत्साह से उसमें खेती करने लगे। इससे कृषि-विज्ञान तथा देश के भिन्न-भिन्न आर्थिक़ प्रश्न समझाने

के लिए भिन्न-भिन्न प्रसंग उपस्थित होने लगे । और बच्चों को बौद्धिक स्तर काफी ऊंचा उठा। लेकिन बच्चों की इस दिलचस्पी के साथ मेहनत करने से एक दूसरी समस्या खड़ी हो गयी । वह यह कि उनके माता-पिता में लालच का उदय होने लगा । जो बच्चे पहले घर का काम नहीं करते थे, वे ग्राम भारती में विजय भाई और दूसरे लोगों के साथ जब मेहनत करने लगे और उसके फलस्वरूप अपने हिस्से के प्याज, पाट आदि सामग्री घर ले जाने लगे तो पालकों ने समझा, अगर ये बच्चे मेहनत करके पैदा कर सकते हैं तो ग्रामभारती में क्यों मेहनत करें ? घर के काम में क्यों न करें ? यह सोचना धीरे धीरे बढ़ने लगा और किसी न किसी बहाने वे अपने बच्चों के लिए शाला से छुट्टी लेने लगे । यह छुट्टी इतनी अधिक होने लगी कि बाद को विजयभाई के लिए दो बीघे की खेती भी संभालना कठिन हो गया ।

हम जब बच्चों के पालकों को समझाते थे, तो वे विचार तो समझ जाते थे लेकिन कुछ दिनों के बाद वही पुराने ढर्रे पर चले जाते थे । काफी दिनों तक इस प्रकार समझा-बुझाकर काम चला और किसी तरह मकई की फसल संभाल पाये । फसल काटने के बाद हम लोग इस प्रश्न पर फिर से विचार करने लगे । हमने देखा कि बच्चों को भी घर के कामों में अधिक दिलचस्पी है, वनिस्पत ग्राम भारती की खेती के, यद्यपि भदई की फसल में उनका हिस्सा संतोषजनक था। वह इतना अधिक था कि वह गांव भर की चर्चा का विषय बना रहा । जब कोई भी मुझसे मिलता, यही कहता कि आपने तो बहुत बड़ी बात कर दी । पढ़ाई के साथ-साथ इतनी कमाई जो जाये तो कहना ही क्या ?

यह सब हुआ, लेकिन न बाबू लोगों ने अपने बच्चे भेजे और ग्रामभारती के बच्चों की हाजिरी के रवैये में कोई परिवर्तन नही हुआ। घूम फिर कर पालक और बच्चे दोनों इस बात पर आ जाते थे कि घर का काम ही करना है। हम लोगों ने सोचा कि ग्रामभारती में प्रथम श्रेणी और द्वितीय श्रेणी के रूप में दो विभाग रखे जायें । प्रथम विभाग में वे बच्चे रहें जो 24 घंटे गुरुकुल में ही रहें, सिर्फ खाना खाने के लिए घर जायें । अर्थात हमने ग्राम भारती के साथ साथ एक सूखे छात्रावास का सिलसिला भी शुरू किया। हमने सब पालकों से कहा कि जिन बच्चों को वे घर के काम से खाली करके गुरुकुल में चौबीस घंटे रख सकेंगे, वे प्रथम श्रेणी के विद्यार्थी होंगे। वे ग्राम भारती की भूमि पर खेती करके मुख्यत: खेती का विज्ञान सीखेंगे और साथ ही प्रात: काल और रात्रि में गणित, भाषा आदि भी पढ़ेंगे । द्वितीय श्रेणी के बच्चे वे होंगे, जो केवल प्रात: और रात्रि में पढ़ने आयेंगे और बाकी समय घर के काम करेंगे । हमने सोचा कि इतने दिनों के सांस्कृतिक विकास के कार्यक्रम के कारण बच्चों की स्थिति ऐसी हो गयी है कि वे घर के काम को शिक्षा के माध्यम के रूप में पहले से अधिक व्यवस्थित कर सकेंगे । पालकों ने दो-तीन दिन तक विचार किया । वे मानते थे कि अगर पूरे समय विजय भाई के साथ बच्चे रहें उनके साथ काम करें और पढ़ें तो बच्चों में उत्पादन शक्ति और सांस्कृतिक विकास दोनों काफी बढ़ेंगे। लेकिन परम्परागत स्वार्थ उनके इस विचार को भी दबा देता रहा । आखिर में 12 में से 8 बच्चों के पालकों ने कह दिया कि वे अपने बच्चों को प्रथम श्रेणी में ही रखना चाहते हैं । धीरे धीरे उनमें 11 बच्चे हो गये । जो एक बच्चा शामिल नहीं हुआ, वे दो भाई थे । उनके पिता ने छोटे बच्चे को ग्राम भारती में शामिल कर बड़े बच्चे को घर के काम में लगा लिया । इससे स्पष्ट है कि लोग निश्चित रूप से ग्राम भारती की प्रक्रिया का महत्व समझने लगे ।

दो समस्याएँ

बच्चों को पूरे समय के लिए छात्रावास में आने पर उनके जीवन पर प्रभाव डालने का मौक़ा अधिक मिलने लगा । उनका सांस्कृतिक विकास तेजी से होने लगा । खेती के काम भी सुव्यवस्थित होने लगे । लेकिन इसमें से दो-एक ऐसी समस्याएं खडी हुईं, जिन पर हर एक नयी तालीम के सेवक को विचार करने की आवश्यकता है । बच्चे जब घर के काम में लगे रहते थे, उस समय जितना आराम चाहते थे, उससे अधिक आराम यहां चाहने लगे । यह सही है कि ग्राम भारती में जो मेहनत करते थे, उसका फल उसी को मिलता था और वह प्रत्यक्ष रूप में था, जबकि घर के काम का कोई नतीजा उन्हें दिखाई नहीं देता था। फिर भी हजारों वर्षा की व्यक्तिगत सम्पत्तिवादी मनोवृत्ति के कारण ग्राम भारती के काम में घर के काम जैसी अभिरुचि न पैदा हो सकी । हम भी मानते हैं कि दैनिक कार्यक्रम में हर एक को विश्राम चाहिए । इसलिए इस समस्या पर हमने अधिक ध्यान नहीं दिया और उनके लिए उतने आराम की व्यवस्था कर दी ।

लेकिन दूसरी समस्या अधिक चिन्तनीय हो गयी, वह यह कि हमारे साथ रहने के कारण उनमें सफाई की आदत, सुव्यवस्थित ढंग से रहने का अभ्यास तथा सामाजिक शिष्टाचार के विकास के कारण उनका जीवन स्तर घरवालों के जीवन स्तर से काफी ऊंचा हो गया । धीरे-धीरे कुछ लड़कों में ऐसा भी मानस बनने लगा, जिससे वे घर के दूसरे लोगों से घृणा करने लगे । मैंने सुना था, किसी कालेज के छात्रावास के एक लडके से जब उसके पिता मिलने आये थे, तो उस लड़के ने अपने साथियों से कहा कि घर का नौकर उनसे मिलने आया है । मैं मानता हूं कि बाहर के आडम्बरपूर्ण रहन सहन और जीवनक्रम के कारण लडकों में ऐसी मनोवृत्ति बनती है, लेकिन गांव में किसान जैसे 6-8 घंटे खेत में काम करने वाले तथा अपने घर की झोपड़ी जैसे स्थान पर रहने वाले बच्चों के मन में भी जब ऐसी मनोवृत्ति पैदा होती है तब शिक्षा पद्धति के बारे में ही विचार करने की आवश्यकता हो जाती है ।

विचार कर किसी निश्चित नतीजे पर पहुंचना कोई आसान काम नहीं । हम चाहें जितनी खेती बारी आदि आवश्यक श्रम करें, और चाहे जितनी टूटी झोपडी में रहें, हमारा सांस्कृतिक स्तर निश्चय ही ऊंचा रहेगा और हमारे संपर्क में तालीम पाये हुए बच्चों का स्तर भी ऊंचा हो ही जायेगा। फिर जब ये बच्चे घर के लोगों के मैले और अव्यवस्थित जीवन को देखेंगे, तो स्वभावत: अपने को कुछ अलग समझने लगेंगे । हम चाहे कोई भी शिक्षा पद्धति अपनायें, शिक्षित बच्चे निसंदेह विकसित होंगे और उनका मेल घर में दूसरे लोगों से नहीं बैठेगा । जब स्थिति ऐसी है, तब शिक्षा द्वारा समाज में भेद-भाव के निराकरण की लक्ष्य पूर्ति तो दूर रही बल्कि हम तत्काल ही शिक्षा द्वारा परिवार में ही भेद भाव पैदा कर देते हैं । *चले थे हरिभजन को ओटन लगे कपास* वाली कहावत के मुताबिक हम ग्राम भारती द्वारा चले थे सामाजिक विषमता का निराकरण करने, लेकिन उस ही प्रक्रिया द्वारा हमने पारिवारिक विषमता का ही निर्माण कर डाला ।

इस प्रश्न पर हम लोग गंभीरता से सोचने लगे, आपस में चर्चा करने लगे, लेकिन कोई तात्कालिक हल नहीं निकाल सके। पूरा परिवार ही नयी तालीम का विद्यार्थी हो, यह विचार यद्यपि पहले ही हमारे मन में आ गया था, लेकिन उसका तुरन्त कोई छोर न दिखाई देने के कारण इस परिस्थिति के बावजूद बच्चों के शिक्षण को बन्द करने की बात सोच नहीं सकते थे लेकिन इस बीच कुछ दूसरी परिस्थितियों ने हमको फिर से पारिवारिक शिक्षण की दिशा में सोचने के लिए प्रेरित किया । यद्यपि पालकों ने बहुत उत्साह से बच्चों को पूरे समय के लिए ग्राम भारती के छात्रावास में शामिल कर दिया था, तथापि व्यक्तिवादी संस्कारों के कारण धीरे धीरे बच्चे गैरहाजिर होने लगे । और 2-3 महिने में फिर उसी स्थिति में पहुंच गये, जिस स्थिति पर से सूखे छात्रावास की कल्पना मुखरित हुई थी। बच्चे फिर से केवल पढ़ने के लिए हाजिर होते थे । इस परिस्थिति के कारण आखिर हमने निर्णय ही कर डाला कि बच्चों को घर से अलग करके तालीम की व्यवस्था समग्र नयी तालीम पद्धति में नहीं बैठेगी । एक दिन बच्चों को बुलाकर उनसे कह दिया कि केवल पढ़ने के लिए गांव में स्कूल मौजूद हैं, तो फिर हम केवल पढ़ाई का काम नहीं करेंगे और गांव में जो स्कूल चल रहा है वे उसमें जाकर भर्ती हो जायें । हमने गांव भर के लोगों को कह दिया कि पढ़ने के लिए गांव का स्कूल काफी है, उसके लिए हम ग्राम भारती नहीं चलायेंगे । इतनी सेवा हम अवश्य कर देंगे कि कोई भी छात्र कभी भी हमारे पास मदद के लिए आ जायेगा तो हम मदद अवश्य कर देंगे ।

बच्चे नहीं पूरा परिवार विद्यार्थी

इस प्रकार साल भर के अनुभव के बाद बच्चों की अलग से तालीम के कार्यक्रम को बन्द करके पूरे परिवार की तालीम के विचार को ग्रामवासियों के सामने रखना शुरू कर दिया । पूरा परिवार ग्राम भारती का विद्यार्थी हो सकता था । इस नतीजे पर हम किन परिस्थितियों के अनुभव से पहुंचे, यह जानना तुम लोगों के लिए दिलचस्प होगा ।

- सामूहिक खेती के अनुभव से यह प्रतीत हुआ कि गांव के लोगों के आज जो पारस्परिक संबंध हैं, उसे देखते हुए परिवार में आपस का सहकार किसी प्रकार के राजनैतिक कानून या आर्थिक कार्यक्रम द्वारा विकसित नहीं हो सकता। इसके लिए समग्र शिक्षण की आवश्यकता है । यह शिक्षण व्यक्तिगत न होकर पारिवारिक ही हो सकता है, क्योंकि समाज की इकाई व्यक्ति नहीं, परिवार है।
- अगर गांव के सारे कार्यक्रम शिक्षा के माध्यम हैं, तो आज की परिस्थित में यह कार्यक्रम निस्संदेह पारिवारिक धन्धे ही हैं । ग्राम भारती के लिए अलग धन्धा नहीं बनाया जा सकता । अगर वैसा बनाया गया, तो उस धन्धे के लिए शिक्षार्थियों की उतनी दिलचस्पी नहीं हो सकती, जिनती की अपने घर के धंधे के प्रति रहती है । और यह भी स्पष्ट है कि बिना अभिरुचि के कोई भी धन्धा शिक्षा का माध्यम नहीं हो सकता है । अगर पारिवारिक धन्धा शिक्षा का माध्यम है तो चूंकि परिवार का हर एक सदस्य उस धन्धे में लगा रहता है, इसलिए धन्धे का विकास पूरे परिवार के विकास से ही सध सकता है ।
- अगर समाज का सांस्कृतिक विकास करना है, तो वह विकास सारे समाज के साथ-साथ ही चल सकता है । बच्चों को अलग से विकसित करने की प्रक्रिया का परिणाम क्या होता है, यह हम ऊपर बता चुके हैं । इस परिस्थिति की मांग हो जाती है कि समग्र नयी तालीम की इकाई पूरा परिवार ही हो ।

इन तीनों कारणों से हमने निश्चित रूप से यह तय कर लिया कि परिवार शिक्षण का संदर्भ निकालकर ही व्यवस्थित तालीम का प्रारंभ किया जाये और जब तक ऐसा संदर्भ नहीं निकलता है, तब तक उस सन्दर्भ का निर्माण ही समग्र नयी तालीम का कार्यक्रम माना जाय । हमने अब यह निश्चय किया है कि हम लोग अपने स्वावलम्बन के लिए सबके साथ खेती करें, पारिवारिक उद्योग चलायें और सामूहिक खेती के भूमि-सदस्य और श्रम सदस्य परिवार को अपना विद्यार्थी मानकर उनसे संपर्क करें, उनकी खेती-बारी, घर-द्वार, आहार-विहार के तरीकों को सुधारने की कोशिश करें और इसी कोशिश के सिलसिले में कुछ व्यवस्थित तालीम की पद्धति का छोर ढूंढें ।

इस विचार से बलिया के सब साथी उत्साहपूर्वक सहमत हैं। अब देखना है कि समग्र नयी तालीम के इस नये अभियान का क्या परिणाम निकलता है ? ◆